जन्म शताब्दी पुस्तकमाला- ५८

पाठ-पूजा का दर्शन भी समझें

(प्रवचन)

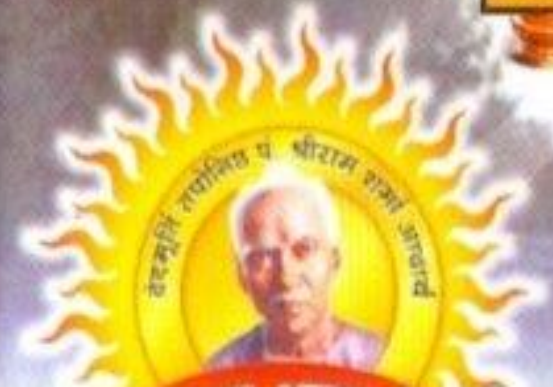

पाठ-पूजा का दर्शन भी समझें

गायत्री मंत्र हमारे साथ-साथ—

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्!

हमारा लक्ष्य, इष्ट—देवत्व

देवताओं की स्थापना का मतलब यही है कि हम अपने जीवन में देवत्व को समाविष्ट करें। देवत्व हमारा लक्ष्य हो, देवत्व हमारा इष्ट हो। हम देवताओं की लाइन में खड़े हों, देवताओं की पंक्तियों में अपना नाम लिखाने की कोशिश करें। आज तो हमने राक्षसों की लाइन में अपना नाम लिखा रखा है। हमारा विचार, हमारे कर्म, हमारी इच्छाएँ, हमारी कामनाएँ, हमारी भावनाएँ, हमारे अभ्यास, हमारी आदतें सब की सब ऐसी निकम्मी बनी पड़ी हैं कि हमें देख करके कोई आदमी नफरत ही कर सकता है। ऐसी स्थिति में अगर भगवान के दरबार में जाएँ तो सिवाय घृणा के और क्या मिल सकता है हमको? मित्रो!

अगर आपको आध्यात्मिकता से लाभ उठाने हों तो आपको देवताओं का स्वरूप धारण करना पड़ेगा। देवताओं को प्रसन्न करने के बारे में जो प्रक्रियाएँ हैं, उनको आप समझिए। पंचोपचार पूजन, षोडशोपचार पूजन का क्या मतलब है, इसका मतलब समझिए। इसका उद्देश्य समझिए।

षोडशोपचार का मर्म

मित्रो! पंचोपचार अथवा षोडशोपचार पूजन करके देवताओं को प्रसन्न किया जाता है। षोडशोपचार का क्या मतलब है, यह आप समझिए तो सही। पंचोपचार का उद्देश्य तो समझिए। नहीं साहब! उद्देश्य तो हम नहीं समझते। हम तो चावल खिलाएँगे, धूपबत्ती व दीप जलाएँगे, पानी पिलाएँगे, फूल चढ़ाएँगे और सब देवताओं की हजामत बनाएँगे। नहीं बेटा! ऐसा नहीं हो सकता। ये सारे के सारे खालिस प्रतीक हैं। हम जल चढ़ाते हैं—'**पाद्यं समर्पयामि,**' '**अर्घ्यं समर्पयामि,**' '**स्नानं समर्पयामि।**' क्या मतलब है? हम अपना श्रम, अपना पसीना लगाएँगे भगवान के

लिए, श्रेष्ठ कामों के लिए। समाज, लोकमंगल, विराट ब्रह्म के लिए हम श्रम का पसीना बहाएँगे, उनके पैर धुलाएँगे पसीने के द्वारा, यह है—'**पाद्यं समर्पयामि।**' इस पानी से क्या काम बनेगा? नहीं साहब! एक चम्मच जल से हम भगवान जी को नहलाएँगे। भगवान जी तो बहुत बड़े हैं? हाँ महाराज जी! हमसे तो चौगुने, सौगुने बड़े हो सकते हैं। फिर उन्हें तो पीछे नहलाना, पहले तू एक चम्मच पानी से नहा करके दिखा। नहीं महाराज जी! '**स्नानं समर्पयामि।**' बेकार की बात मत कर, किसे करा रहा है स्नान? स्नान की जो वृत्ति, जो भावना है, उसके पीछे रहस्य छिपा है कि हम पहले स्वयं अपनी सफाई करेंगे, अंतरंग से स्नान करेंगे। यह हमारा भगवान और ईमान जो गंदा, कलुषित हो गया है, आप इसको स्नान कराइए। यह ही है '**स्नानं समर्पयामि।**'

'**अक्षतान् समर्पयामि**' का क्या मतलब है? मित्रो! इसका मतलब एक ही है कि हमारी जो

कमाई है, उसका एक अंश हमें भगवान को देना चाहिए। अक्षत इसका स्मरण दिलाते हैं कि हम जो पैसा कमाते हैं, उसमें से आपका हिस्सा निकालते हैं, लीजिए यह अंशदान—'**अक्षतान् समर्पयामि।**' हम सब नहीं खाएँगे, जो कमाएँगे, उसका थोड़ा हिस्सा अपने लिए रखेंगे और शेष लोकमंगल के कार्यों में लगाएँगे। हे भगवान! हमारे भीतर इतनी निष्ठा जगाना कि हम कम से कम में अपना गुजारा करें और अधिक से अधिक धन आपको देते चले जाएँ। इसका प्रतीक (सिंबल) है—'**अक्षतान् समर्पयामि।**'

पुष्प जैसे बनिए

मित्रो! हम भगवान जी को फूल इसलिए चढ़ाते हैं कि हमारा फूल जैसा जीवन, हँसता-हँसाता हुआ जीवन, खिलता-खिलाता हुआ कोमल जीवन बने। अगर आपको यह विश्वास हो जाए कि हम फूल जैसा जीवन जिएँगे, फूल जैसे बनेंगे तो आपका जीवन भगवान के चरणों पर, भगवान

के गले पर, भगवान के मुकुट पर विराजमान होने का अधिकारी बन सकता है। नहीं साहब! हम तो भगवान जी को फूल खिलाएँगे। क्या करेंगे भगवान जी फूल खाकर के? वे तो चारों ओर घूमते रहते हैं। जहाँ कहीं बगीचा दिखाई पड़ेगा, वहीं जा बैठेंगे और फूल सूँघते रहेंगे। क्यों भगवान जी! क्या मामला है? अरे साहब! बहुत दिनों से फूल सूँघने को नहीं मिले थे, सो आ गए, यहाँ फूलों की महक आती रहती है। तो फिर यहीं रहिए न? हाँ, जहाँ खुशबू आएगी, वहीं रहेंगे। बेटे! भगवान को खुशबू और बदबू से, फूल और पत्ती से कोई ताल्लुक नहीं है। फूल हम भगवान को नहीं चढ़ाते, बल्कि अपने ईमान को चढ़ाते हैं और भगवान के बहाने अपने आप को सिखाते हैं कि तुझे फूल जैसा बनना चाहिए। हमारा भगवान जो हमारे भीतर सो गया है, उसको हम नसीहत देते हैं, उसको सिखाते हैं, उसको बहलाते-फुसलाते हैं कि आप फूल बनिए। भगवान क्या करेंगे फूल का?

चंदन सी सुगंधि एवं प्रकाशवान जीवन

मित्रो! भगवान जी को चंदन हम इसलिए लगाते हैं कि हमारी जिंदगी चंदन जैसी सुगंधित बननी चाहिए। साँप और बिच्छू हमारे आस-पास रहें, लेकिन हम उनका जहर अपने ऊपर स्वीकार न करें। हम साँप-बिच्छुओं को भी तरावट और खुशबू देते चले जाएँ। हमारे समीप जो काँटे उगे हों, उनको भी हम खुशबू देते और अपने समान बनाते चले जाएँ। अगर हमारी यह वृत्ति और यह प्रयास रहे तो हमारा चंदन चढ़ाना सार्थक। मित्रो हम जो दीपक जलाते हैं, प्यार से भरा लबालब जीवन। उसमें वर्त्तिका अर्थात लगन और उसके भीतर प्रकाश। जलता हुआ प्रकाश हमारे जीवन को प्रकाशित करे। हम प्रकाशवान जीवन जिएँ तो हमारा दीपक जलाना सही है। बेटे! भगवान जी को दीपक की कोई जरूरत नहीं है। भगवान जी का तो दिन में सूरज जलता रहता है और रात में चाँद। उनको तेरे दीपक का क्या करना है? दीपक तो हम अपने आप को

दिखाते हैं। अपने मन को, बुद्धि को, चित्त को, अपने अंतर को दिखाते हैं कि हम दीपक होकर के जिएँ। दीपक हमारा लक्ष्य होना चाहिए। अगर यह वृत्ति हमारे पास हो तो मैं समझूँगा कि भगवान की तरफ आपका मन चलने लगा।

आत्मशोधन—मूल लक्ष्य

मित्रो! ढेरों की ढेरों उपासनाएँ हमने आपको बता दी हैं। उन सबके पीछे एक ही उद्देश्य है, दूसरा कोई उद्देश्य नहीं है। भगवान को बहकाना और भगवान को फुसलाना उनका उद्देश्य नहीं है, बल्कि अपने आप का परिशोधन और अपने आप का परिष्कार। बस, सारी उपासनाओं का इतना ही उद्देश्य है। भगवान के भजन से लेकर जप-तप और ध्यान करने तक का एक ही उद्देश्य है। भगवान पर इसका कोई असर नहीं हो सकता। असर होगा तो आपके ऊपर कि आप सही होते जाएँगे और सही होते ही भगवान खिंचते हुए चले आएँगे। जैसे मैं एक दिन आपसे कह रहा था कि पेड़ों में वह ताकत

होती है कि बादलों को खींच करके ले आते हैं। आप भी भगवान को खींच करके ले आ सकते हैं, अगर आपके पास वह चुंबक है, मैग्नेट है, जिसको मैं चरित्र कहता हूँ। जिसको मैं लोकसेवी बुद्धि और वृत्ति कहता हूँ। अगर यह चीज है तो आपके पास भगवान जी आ जाएँगे। आपको भगवान जी के पास जाने की कोई जरूरत नहीं है। सारी की सारी प्रक्रियाएँ इसी के लिए बनाई गई हैं। आत्मशोधन की प्रक्रिया, देवपूजन की प्रक्रिया के बारे में थोड़ा सा प्रकाश मैंने डाला।

जप क्या है? जप है बेटे! रगड़। जप किसे कहते हैं? जप बार-बार का रेपिटिशन है। रेपिटिशन क्या है? जैसे हम मिट्टी लेते हैं और हाथ धोते हैं। अरे साहब! यह क्या कर रहे हैं आप? बेटे! हम हाथ माँज रहे हैं, रगड़ रहे हैं। बरतन को बार-बार माँजते हैं। जप मानें रिपीट करना। फिर बार-बार क्यों करते हैं? जैसे पत्थर के ऊपर रस्सी की रगड़ पड़ती है तो निशान पड़ जाता है। यह हमारा पत्थर

वाला दिल है, इस पर राम नाम की रस्सी की हम बार-बार रगड़ लगाते हैं। बार-बार गायत्री मंत्र का जप करते हैं, २४००० गायत्री मंत्र का जप करते हैं, ताकि इस पत्थर जैसे, चट्टान जैसे दिल पर निशान पड़ें। साबुन हम बार-बार लगाते हैं, क्या मतलब है? यह रेपिटिशन हो रहा है। हम बार-बार कपड़े धोते हैं। अरे ऐसे धोया कीजिए कि कपड़े पर पानी डाल दिया और निचोड़ दिया। नहीं, कपड़ा साफ करने के लिए रगड़ना जरूरी है। यह रेपिटिशन है।

अपनी धुलाई-धुनाई ही जप

मित्रो! रेपिटिशन माने अपने आप की धुलाई, अपने आप की धुनाई। जप करने का मतलब जहाँ तक मैं समझ पाया हूँ, यही है और यही होना चाहिए। हम भगवान को बार-बार पुकारते हैं, जिसको हमने खो दिया है। उसको हम याद करते हैं कि हमारा हीरा चला गया, हमारा जीवन, हमारा प्राण चला गया। इसीलिए हम भगवान को, गायत्री माता को बार-बार पुकारते हैं। सीता जी को रावण

चुरा ले गया था। रामचंद्र जी हर जगह पुकारते फिरे सीता-सीता-सीता। हजारों बार उन्होंने पुकारा, पेड़ों से, पत्तों से पूछा, रिपीट करते रहे बार-बार सीता-सीता-सीता। दिन और रात सीता-सीता चिल्ला रहे थे कि हमारी सीता को कोई चुरा ले गया, हमारे ईमान को कोई चुरा ले गया। हमारी आस्थाएँ चली गईं, हमारा लक्ष्य हमारा आदर्श चला गया। बेटे! हमारा भी सब कुछ चला गया। हम लाश के, छूँछ के तरीके से, सड़े हुए, मरे हुए इनसान के तरीके से आदर्शविहीन, सिद्धांतविहीन, पेट और औलाद के लिए जिंदा रहने वाले कृमि-कीटकों के तरीके से जी रहे हैं। हमारी इनसानियत चली गई, खो गई। जिसको हम गायत्री माता के रूप में पुकारते हैं और कभी २४००० जप, कभी १०८ बार जप करते हैं।

गज और ग्राह की लड़ाई में एक ग्राह था और एक था गज। ग्राह ने पकड़ लिया, गज का पाँव पकड़कर पानी में घसीट ले गया। गज चिल्लाया

था। उसने १०८ बार भगवान का नाम लिया था। मित्रो! हमारी तो चारों की चारों टाँगें और एक हमारी सूँड़ और एक हमारी पूँछ, छहों को छह ग्राहों ने पकड़ लिया है और ये हमें भवसागर में डुबोने के लिए ले जा रहे हैं। एक ग्राह का नाम काम, एक ग्राह का क्रोध, एक का लोभ, एक का मोह, एक का मद और एक का मत्सर। ये छह के छहों पकड़कर हमको डुबोने ले जा रहे हैं। हम गज के तरीके से चिल्लाते हैं। हे भगवान! हम डूबे जा रहे हैं, आपकी भुजाएँ लंबी हों तो आप आइए और हमको इस पाप-पंक में से बचाइए। हम आपसे और कुछ नहीं माँगते।

क्या करें, प्रभु से प्रार्थना

रवींद्रनाथ टैगोर की एक कविता, जिसमें उन्होंने यह प्रार्थना की है कि हे भगवान! जब हम आपसे मुसीबत से छुटकारा प्राप्त करने की प्रार्थना करें तो आप इनकार कर देना। आप हमसे यह कहना कि अपनी गलतियों से मुसीबतें बुलाई हैं, गलती ठीक

कीजिए। हे भगवान! जब हम आपसे संपत्ति माँगें तो आप देने से इनकार कर देना और यह कहना— हमने आपको ये कलाइयाँ और यह अक्ल इसलिए दी कि आप इनका ठीक तरीके से इस्तेमाल कर रहे होते तो आपने चैन की जिंदगी जी होती, संतोष की जिंदगी जी होती। आप हमारी कोई मदद मत करना, लेकिन अगर आप दया करते हों, भक्तवत्सल हों और आपके पास कोई वरदान हो तो एक ही वरदान देना कि हम जब पाप के पंक में गिर रहे हों, तो अपनी लंबी वाली भुजाएँ फैला करके हमको रोक लेना, ऊँचा उठा लेना, बस और हमको कोई चीज नहीं चाहिए।

मित्रो! हमको भगवान से एक ही प्रार्थना करनी चाहिए कि पाप के पंक में गज के तरीके से जो गिरते-डूबते चले जा रहे हैं, उनका उद्धार अगर कर सकते हों तो कर दीजिए। राम नाम की, गायत्री माता की पुकार अगर हम द्रौपदी के तरीके से करते हैं कि हम नंगे हुए जा रहे हैं, हे भगवान! आइए और हमारे

जीवन को बचा लीजिए। यह मनुष्य का जीवन तो गया। बस, यही है राम नाम का जप, गायत्री मंत्र का जप, इसी का नाम है अनुष्ठान। नहीं महाराज जी! जप करने से भगवान प्रसन्न हो जाते हैं। बेटे! मैं इस बात पर विश्वास नहीं करता। नाम लेने से कोई प्रसन्न क्यों हो जाएगा, क्या वजह है? नहीं साहब! राम नाम लेने से उद्धार हो जाता है। गलत, नाम लेने से किसी का उद्धार नहीं हुआ, न कभी हो सकता है। हाँ, अगर आप राम नाम लें और वाल्मीकि के तरीके से राम का काम भी करें तो मैं आपकी बात समझ सकता हूँ। अजामिल के तरीके से आप राम नाम लें और अजामिल ने जिस तरीके से बकरे काटना बंद कर दिया था, आप भी गलत काम करना बंद कर दें तो मैं समझूँगा कि आपने राम का नाम लिया है।

काम करें, हम राम का

मित्रो! जितने भी संत हुए हैं, जिनके राम नाम की महत्ता के बारे में हम बताते रहते हैं, उनमें

से प्रत्येक संत ने अपने पापों को एक क्षण में काटकर फेंक दिया। आपका भी राम का नाम यदि सही रहा होगा तो आपने पापों को छोड़ दिया होगा। चाहे वह राम के नाम का असर हो तो मुबारक और आपकी भक्ति का असर हो तो मुबारक। मैं झगड़े में नहीं पड़ता, जो राम का काम कर रहा होगा और राम का नाम ले रहा होगा तो उसके सत्परिणाम जरूर निकलने चाहिए, जैसा कि गोस्वामी जी ने राम नाम का माहात्म्य बताया है। बेटे! बिजली के निगेटिव और पोजिटिव दो तार नहीं मिलेंगे तो बिजली का करैंट पैदा नहीं हो सकता। आदमी का चरित्र और आदमी का भजन, ये दोनों नहीं मिलेंगे तो कोई भी भजन सार्थक नहीं हो सकता। राम का नाम, आदमी का चरित्र, आदमी की समाजनिष्ठा, आदमी की उदारता, इनका हर हाल में समन्वय होना चाहिए। अगर यह समन्वय नहीं है तो कोई अच्छा परिणाम नहीं हो सकता। राम नाम के जप की महत्ता, ध्यान की महत्ता यही है।

मित्रो! हम बहिर्मुखी जीवन जीते हैं, इसलिए बाहर की समस्याएँ हम पर हावी रहती हैं। अभी हम आँख बंद कर ध्यान करते हैं तो हमें बाहर की चीजें दिखाई देती हैं। जो शक्तियाँ, विभूतियाँ, जो चमत्कार और संपदाएँ भीतर भरी पड़ी हैं, वे हमें दिखाई नहीं पड़तीं। पेड़ का बाहर वाला हिस्सा हमको दिखाई पड़ता है, जड़ें दिखाई नहीं पड़तीं। जीवन की प्रगति, जीवन की शांति, जीवन की उन्नति की जड़ें हमारे भीतर हैं। जड़ों को खोजिए, जड़ों को कुरेदिए, जड़ों में खाद-पानी लगाइए, ताकि आपका पेड़ बढ़ने लगे, फलने-फूलने लगे। जड़ें हमारे भीतर हैं, पर वे दिखाई नहीं देतीं। कस्तूरी हमारे भीतर है, बाहर नहीं है। ध्यान से हम अपने बहिर्मुखी जीवन को अंतर्मुखी बनाते हैं और भीतर के भगवान को खोजते हैं। अपना चरित्र और अपना भविष्य देखने की कोशिश करते हैं। ध्यान का उद्देश्य है कि हम अपने भीतर देखें और हमने जो गँवा दिया है, जो भुला दिया है, उसको खोजें कि

वह कहाँ है? हमारे सामने बड़ी भारी गुत्थी है कि जो हमारी शांति थी, सिद्धि थी, वह कहीं चली गई, खो गई। हम उसकी तलाश करते हैं कि उसे कौन ले गया? हम कहाँ भूल गए? कहाँ भटक गए? मेले में हम कैसे खो गए? अपना नाम कैसे भुला बैठे? अपना रास्ता कहाँ भूल गए? अभी न तो यह पता है कि हम कहाँ से आए हैं और कहाँ जा रहे हैं। अपना लक्ष्य भुला बैठे, दिशा भुला बैठे। मेले में इस कदर मशगूल हो गए कि तमाशा देखा तो तमाशे वाले के पास खड़े हो गए, नाच वाले को देखा तो वहाँ खड़े हो गए। बाजीगर को देखा तो वहाँ खड़े हो गए। मिठाई वाले को देखा तो वहाँ खड़े हो गए। मेले-ठेले में ही खो गए। अरे अभागे! तुझे जाना कहाँ है? ध्यान कर कहाँ से आया और कहाँ जाना है?

ध्यान का अर्थ—लक्ष्य का चिंतन

मित्रो! ध्यान की यह प्रक्रिया भगवान को प्रसन्न करने के लिए नहीं है। भगवान जी ध्यान

में आते हैं तो, नहीं आते हैं तो, इससे कोई मतलब नहीं है। आपका मतलब यह होना चाहिए कि हमारा ध्यान अपने जीवन की तरफ है कि नहीं, लक्ष्य की ओर है कि नहीं है। बेटे! ध्यान का मतलब इतना ही है, जहाँ तक मैं समझ पाया हूँ कि ध्यान का मतलब है—एकाग्रता, तन्मयता। मन नहीं भागना चाहिए। महाराज जी! मेरा मन तो भागता है। तो भागने दे। बेटे! मन को एक जगह केंद्रित नहीं किया जा सकता। दिमाग की बनावट ही ऐसी है कि वह एक जगह ठहर नहीं सकता। एक जगह ठहरेगा तो, या तो समाधिस्थ हो जाएगा या आदमी पागल हो जाएगा। आदमी का दिमाग ठहरने के हिसाब से नहीं बनाया गया है। ध्यान में जो आपको गणेश जी की मूर्ति दिखाते हैं, वह सिर्फ इसलिए दिखाते हैं कि हमारा जो ध्यान है, वह गणेश जी की सूँड़, गणेश जी का चूहा, गणेश जी का अंकुश, गणेश जी की मिठाई, गणेश जी के दाँत, गणेश जी की तोंद,गणेश जी की आँखें, ये सारे के सारे मन को एक छोटे से दायरे में

घुमाते रहें। बस, इसीलिए चित्र या मूर्तियाँ बना दी गई हैं।

मन ठहर सकता है? नहीं। मन रुकेगा नहीं। मन मीरा का भी रुका नहीं, मन रामकृष्ण परमहंस का भी रुका नहीं, चैतन्य महाप्रभु का रुका नहीं। हर समय कहते रहते थे—**घायल की गति घायल जाने, जो कोई घायल होय**। वैज्ञानिक का भी मन ठहरता नहीं है। एकाग्र तो होता है, लेकिन एक दिशा में सोचता रहता है कि यह केमिकल इसमें मिला देंगे तो यह बन जाएगा। मन एकाग्र है बेशक, लेकिन अपने विषय में तेजी से चल रहा है। आप ध्यान से मन को एकाग्र करें, लेकिन अपनी दिशा और धारा के बारे में विचार करें। हमारा जीवन कहाँ चलना है? हमें क्या बनना है? कहाँ जाना है? अपने लक्ष्य के संबंध में जिस समय आप एक ही विषय पर विचार कर रहे होंगे, आपका चिंतन-मनन तन्मय होकर चल रहा होगा, जीवन-लक्ष्य, महानता प्राप्ति के बारे में आप प्लानिंग कर रहे होंगे, मैं समझ लूँगा

कि आप ध्यान में, समाधि में बैठे हुए हैं। मैं जब लेख लिखने के लिए बैठता हूँ तो इतना तन्मय हो जाता हूँ कि आप मेरे पास से निकल जाइए तो मुझे यह पता नहीं चलता कि कौन आया और कौन चला गया? मैं ध्यानमग्न रहता हूँ, लेकिन उस वक्त मेरा दिमाग इतनी तेजी से काम करता रहता है कि एक सेकंड के भीतर हजारों विचार, हजारों रिफरेन्स आ जाते हैं। मेरा दिमाग उस समय इतना एक्टिव, सक्रिय होता है कि अगर आप देखेंगे तो कहेंगे कि इस वक्त तो इन्होंने हद कर दी। लट्टू जब घूमता है तो मालूम पड़ता है कि टिका हुआ है, परंतु वह इतनी तेजी से घूमता है कि उसकी चाल मालूम नहीं पड़ती।

गहरे डूबकर ध्यान करें

मित्रो! ध्यान का अर्थ यह है कि आप मनन और चिंतन इस तेजी के साथ करें कि आज की दुनिया से अपने आप को अलग कर लें और अपने जीवन के संबंध में, अपने लक्ष्य के संबंध में, अपने परिष्कार के संबंध में इतने ज्यादा गहरे डूब जाएँ

कि उसके अलावा कोई और चीज समझ में ही न आए। मित्रो! यह ध्यान की प्रक्रिया है। नहीं साहब! ध्यान में हमारा मन भाग जाएगा तो? तो भागने दीजिए, इससे आपके ध्यान में कोई फरक नहीं पड़ने वाला है। कैसे? चलिए मैं विधि बता देता हूँ। आपका मन जहाँ कहीं भी जाए, आप यह मानकर चलिए कि यह भगवान का रूप है। यह जो संसार है, हर जगह यह विराट ब्रह्म है। इससे बाहर तो मन कहीं नहीं जाएगा। नहीं महाराज जी! रहेगा तो इसी में। तो बस, यह मान लीजिए कि सारा जगत विराट ब्रह्म है और मन ब्रह्म की परिक्रमा कर रहा है और ब्रह्म में घूम रहा है। फिर चाहे वह पेड़ हो, जल हो, पहाड़ हो या सिनेमाघर हो। सब जगह यह मानकर चलिए कि यह भगवान का स्वरूप है। सारी सृष्टि में ब्रह्मसत्ता समाई हुई है और हमारा मन जहाँ कहीं भी जा रहा है, सब जगह ब्रह्म के दर्शन कर रहा है। चलने दीजिए मन को, कहाँ जाएगा मन? मन एकाग्र नहीं होता और

न ही आपको इसकी आवश्यकता है। आप तो अपने लक्ष्य और अपने उद्देश्य के ऊपर मनन और चिंतन में, स्वाध्याय और सत्संग में इतना तन्मय हो जाइए कि अपने जीवन की दिशाधारा के संबंध में विचार करने के अलावा कोई और विचार ही न आए। बस, समझ लीजिए कि आपके ध्यान का उद्देश्य पूरा हो गया।

नहीं साहब! आप ऐसा उपाय बताइए कि जिससे मन भागने न पाए। बेटे! मन भागेगा, यह रुकेगा नहीं। हमारा मन लिखते समय और पूजा करते समय बिलकुल भागता है। पूजा करते समय हमारा मन इतना सक्रिय होता है कि आप इसे जरा खोल करके देख लीजिए। भगवान के पास, भगवान की समीपता, भगवान का प्यार और हमारा समर्पण आदि के भाव हमारे भीतर इतने ज्यादा उठते हैं कि हम काँपने लगते हैं। विचारों को बंद कर दीजिए। नहीं, विचार बंद नहीं हो सकते। विचारों को दिशा दीजिए, धारा दीजिए। बस, यही ध्यान है।

सोऽहम्, एकोऽहम्

मित्रो! 'सोऽहम्' का अर्थ यह है कि भगवान हमारे जीवन में समाविष्ट हो गए और हमने अपने 'अहं' को बाहर निकाल दिया और 'सो' हमारे भीतर समाविष्ट हो गया। भगवान का स्वामित्व हमारे शरीर में, भगवान का स्वामित्व हमारी इंद्रियों में, भगवान का स्वामित्व हमारे रोम-रोम पर, भगवान का स्वामित्व हमारे पैसे पर हो गया। अगर ये विचार हमारे मन में आएँ तो 'सोऽहम्' की उपासना सही है, जिससे भगवान और हम एक हो जाते हैं। 'सो' माने वह और 'अहं' माने मैं। हम दोनों एक हो जाते हैं। दोनों की सत्ता एक है। जिस तरह दूध और पानी मिल जाते हैं। ऐसे ही हम—पानी और भगवान—दूध दोनों को आपस में मिला दिया। भगवान के विचार हमारे, हमारी इच्छाएँ भगवान की और भगवान की इच्छाएँ हमारी हो गईं। इस तरह की एकता आप स्थापित कर लें। **'एकोऽहम्'** स्थापित कर लें तो फिर द्वैत खत्म हो जाएगा और अद्वैत रह जाएगा। द्वैत

को मिटा लेना और अद्वैत को स्थापित कर लेना, सबमें अपने आप को देखना और अपने में सबको देखना, अद्वैत की यह वृत्ति 'सोऽहम्' की उपासना है।

मित्रो! 'खेचरी मुद्रा' अपने भीतर से ही रसपान करने को कहते हैं। मस्तिष्क मध्य स्थित सहस्रार हमारा ब्रह्मलोक है। इस ब्रह्मलोक में क्षीरसागर भरा हुआ है, कैलाश भरा हुआ पड़ा है। इसी में क्षीरसागर है, मानसरोवर है। कैलाश पर्वत इसी में है। इसी में शेषशायी विष्णु सोए हुए हैं, हमारे श्रेष्ठ विचारों के रूप में। इसका हम ध्यान करते हैं, अपनी जिह्वा द्वारा आनंद और उल्लास के रूप में। यही खेचरी मुद्रा हो जाती है। यह उपासना का अंतिम चरण और अंतिम बिंदु है। प्रारंभिक चरण और प्रारंभिक बिंदु वहाँ से प्रारंभ होता है, जहाँ हमने आपको ४५ मिनट की उपासना के अंत में समर्पणयोग सिखाया है। जल का पात्र लेकर के हम जाते हैं और सूर्य भगवान के सामने जल चढ़ा देते हैं। इसका क्या मतलब है? बेटे! सूर्यनारायण तो कितने लंबे-चौड़े हैं। उनके

सामने यह जो जरा सा पानी हम गिरा रहे हैं, इससे उनको क्या फायदा होगा? इतना पानी वहाँ तक जाएगा तो उन तक पहुँचने में कितना समय लगेगा? अगर चंद्रमा की तरह रॉकेट से सूरज तक पानी भेजेगा तो भी उन तक पहुँचने में सालों लग जाएँगे। तब तक क्या वे प्यासे रहेंगे? उनका तो दम निकल जाएगा। बेटे! यह मतलब नहीं है इसका। उनको पानी की जरा सी भी जरूरत होगी तो जरा सी आग निकालेंगे और समुद्र का सारा पानी भाप बनाकर पी जाएँगे। उनके पास इसका इंतजाम है। तेरे पानी के बिना उनका कोई हर्ज नहीं होगा।

सूर्यार्घ्य किसलिए?

साथियो! सूर्यनारायण तो एक ही बात चाहते हैं कि उस सूर्यरूपी प्रकाश को, सूर्यरूपी भगवान को हम अपने जीवन का जल समर्पित करें। लोटे में रखी हुई जलरूपी जो हमारी जीवन-संपदा है, देहरूपी छोटे से घटाकाश के भीतर जो कुछ भी जलरूपी संपदा कैद है, इसको हम खाली करते हैं और भगवान को चढ़ाते

हैं। जब हम जल चढ़ाते हैं और अपने आप को भगवान को सौंप देते हैं तो मित्रो! इसका क्या परिणाम होगा? इसका परिणाम यह होगा कि हमारे मन में यह भाव आएगा कि हमारे जीवन का जल भाप बन जाए, फैल जाए, बिखर जाए और कहीं भी ओस की बूँद बनकर टपके और तरावट लेकर जाए, सड़ने न पाए। इस छोटे से घड़े में सड़ने न पाए। हमारी अक्ल, हमारा श्रम, हमारी संपदा इस छोटे से घड़े के दायरे में रहकर सड़ने न पाए। इसको हम फैला दें और इसको उदात्त बनाते हुए चले जाएँ तो समझना चाहिए कि सूर्य भगवान को अर्घ्य चढ़ाने का उद्देश्य पूरा हो गया।

समर्पण का शिक्षण

मित्रो! सूर्य भगवान को अर्घ्य चढ़ाने के संबंध में रवींद्रनाथ टैगोर की एक कविता मुझे अकसर याद आती रहती है और मैं उसे बड़े मजे और बड़े प्यार से सुनाया करता हूँ। रवींद्रनाथ टैगोर ने गाया है—

"मैं गया दरवाजे-दरवाजे पर भीख माँगने के लिए।
अनाज से भर ली मैंने झोली। एक आया भिखारी,

उसने पसारा हाथ, हमको भी दे कुछ, जो तेरे पास है। मैंने बड़ी कंजूसी से, बड़ी हिम्मत को इकट्ठा किया और एक दाना निकाल करके उस भिखारी की हथेली पर रखा। भिखारी उस दाने को लेकर हँसता-मुस्कराता चला गया। मैं आया अपने घर और घर आकर के मैंने देखा, एक बड़ा सा सोने का दाना उस अनाज के बीच में रखा हुआ था। समझ गया मैं कि सोने का दाना कहाँ से आया?" रवींद्रनाथ टैगोर ने गाया—"मैं सिर धुन-धुन के पछताया कि मैंने अपनी सारी झोली के दाने क्यों न भिखारी के हाथ में दिए, ताकि वो मेरी झोली के सारे समूचे दाने सोने के होकर आ गए होते।"

मित्रो! जिन्होंने अपने दाने भिखारी के हाथ पर रखे, भगवान के हाथ पर रखे, उनके दाने लाखों गुने होकर के आ गए और सोने के होकर के आ गए। गांधी के दाने सोने के होकर के आ गए। बुद्ध के दाने सोने के होकर के आ गए। नानक के दाने सोने के होकर के आ गए। सुदामा के दाने सोने के

होकर के आ गए और हमारे दाने सोने के होकर के आ गए। मित्रो! यही परंपरा रही है, यही है समर्पणयोग। यही है भगवान की बैंक में जमा करना। यही है अपने आप को खाली करना। फिर से भर जाने के लिए इससे कम में कोई बात नहीं बनती और इससे छोटा कोई सिद्धांत नहीं होता। यही है वह शिक्षण जो समर्पणयोग के नाम पर, सूर्य भगवान को जल चढ़ाने के नाम पर हम आपको सिखाते हैं। चाहे जप हो, चाहे ध्यान हो, चाहे खेचरी मुद्रा हो, चाहे 'सोऽहम्' साधना हो। चाहे देवपूजन की प्रक्रिया हो, चाहे आत्मशोधन हो, चाहे जल चढ़ाना हो अथवा कोई अन्य प्रक्रिया क्यों न हो! सबका उद्देश्य केवल एक है कि व्यक्ति अपने आपको देखे, अपने आप को समझे, अपनी समीक्षा करे और अपने आप को सुधारे, अपने को ठीक करे।

यही है पूजा-पाठ की फिलॉसफी

मित्रो! अगर हम अपने आप को ठीक कर पाए तो हमारी जिंदगी की हर समस्या ठीक होती

हुई दिखाई पड़ेगी। भगवान, जिसको हम गलत समझते हैं, वह भी सही रूप में सामने आए, अध्यात्म का यही शिक्षण है, यही साइंस है और यही पूजा-पाठ की फिलॉसफी है। मुझे उम्मीद है कि आप इसे समझने की कोशिश करेंगे। अगर आपने यह समझा, इसको स्वीकार किया तो मैं समझूँगा कि सत्य के आप नजदीक आ गए और वहाँ आ गए जहाँ कि ऋषियों ने अध्यात्म की शुरुआत की थी। अध्यात्म का विस्तार किया था। आज तो अध्यात्म भ्रमवादी जंजाल का, अज्ञान का एक आवरण मात्र रह गया है। अगर अज्ञान के आवरण में से निकलकर वास्तविकता के नजदीक जाएँ तो आप यही पाएँगे, जैसा कि मैंने निवेदन किया।

मूर्तिपूजा चित्त शुद्धि का साधन

मनुष्य का यह स्वभाव है कि जब तक वह यह जानता है कि कोई उसके कामों, चरित्र या विविध हाव-भाव विचारों को देख रहा है, तब तक वह बड़ा सावधान रहता है। बाह्य नियंत्रण हटते ही वह

शिथिल सा होकर पुनः पतन में बहक जाता है। मंदिर में भगवान की मूर्ति के सम्मुख उसे सदैव ऐसा अनुभव होता रहता है कि वह ईश्वर के सम्मुख है, परमात्मा उसके कार्यों, मंतव्यों और विचारों को सतर्कता से देख रहे हैं, अतः उसे चित्तशुद्धि में सहायता मिलती है। मूर्ति चित्तशुद्धि के लिए प्रत्यक्ष परमेश्वर का प्रतिनिधित्व करती है। जिन भारतीय ऋषियों ने भगवान की मूर्ति की कल्पना की थी, वे मनोविज्ञानवेत्ता भी थे। उनके इस उपाय से भोली भावुक जनता की चित्तशुद्धि हुई। मनुष्य ने अपनी सात्त्विक प्रवृत्तियों, कला और सौंदर्य वृत्ति का सारा प्रदर्शन मंदिरों में किया है। मूर्ति में भगवान की भावना और अपनी श्रद्धा भरकर उन्होंने आत्मविकास किया।

आचार्य विनोबा भावे ने लिखा है—"मूर्ति न होती तो बगीचे में से फूल तोड़कर मनुष्य केवल उसे अपनी नाक तक ही लगाता, किंतु सात्त्विक भावना से भरकर भगवान की मूर्ति पर फूल चढ़ाकर, जो कि फूल के लिए शायद सर्वोच्च स्थान है, मनुष्य

ने अपनी गंध वासना संयत और उन्नत की। अपनी वासना को उन्नत, परिष्कृत और संयमित करने के लिए भगवान के, समर्पण की युक्ति निकाली।''

रामदास स्वामी ने एक स्थान पर लिखा है—'देवाचें वैभव बाढ़वावें' (भगवान का वैभव बढ़ाओ)।

अल्पज्ञ, अशक्त, अज्ञानी मनुष्य भला भगवान का वैभव क्या बढ़ाएगा? वह महान है, स्वयं असीम शक्तियों का पुंज है। उधर हम रंक हैं, अशक्त हैं, अपनी शक्तियों में सीमित हैं। लेकिन इस उक्ति का तात्पर्य यही है कि हम ऐसे कार्य, ऐसी भावना प्रकट करें जो हमारे माध्यम से हमारे पिता परमेश्वर के महत्त्व को प्रकट करने वाले हों। परमेश्वर का वैभव बढ़ाने की कोशिश करने में हम स्वयं अपना जीवन उन्नत कर लेते हैं, उसे ईश्वरीय शक्तियों से भर लेते हैं।

मंदिर में कोई प्रतिमा स्थापित कर निरंतर उन्हें अपने कार्यों का द्रष्टा मानकर हम जो सदाचरण करते हैं, अपने कर्त्तव्यों को पूर्ण करते हैं; भजन, पूजन,

स्वाध्याय, प्रार्थना करते हैं, वही भगवान का वैभव बढ़ाने वाली बातें हैं। जिन विचारों या कार्यों से हमारा देवत्व प्रकट होता है, वे ही इस दुर्लभ मानव देह से करने योग्य कार्य हैं। वाणी से भगवान के दिव्य गुणों, अतुल सामर्थ्य का गुणगान करें, हाथों से पवित्र कार्य करें; ब्रह्म चिंतन, भजन गायन और अर्चन से बुद्धि को शुद्ध बनाएँ, यही हमारे अहंकार को दूर कर सकता है और चित्त शुद्ध कर सकता है।

जब मूर्ति में हम भगवान की आस्था, श्रद्धा और विश्वास को स्थापित कर देते हैं, तो वही दिव्य सामर्थ्य से पूर्ण हो जाती है। उसी पत्थर की प्रतिमा के सामने हमारा सिर अपने आप झुक जाता है। वह मनुष्य की श्रद्धा का ही चमत्कार है। इस मूर्ति के सामने निरंतर रहने से चित्त शुद्ध होता है और आत्मानुशासन प्राप्त हो जाता है। जीवन का चरम लक्ष्य होना चाहिए—ईश्वर से तादात्म्य और इसी को मानना चाहिए—परम पुरुषार्थ। आज की बात यहीं समाप्त।

॥ ॐ शांतिः ॥

सद्वाक्य

✧ मनुष्यता सबसे अधिक मूल्यवान है। उसकी रक्षा करना प्रत्येक जागरूक व्यक्ति का परम कर्त्तव्य है।

✧ व्यसनों से कोसों दूर रहें, क्योंकि ये वास्तविक प्राणघातक शत्रु हैं।

✧ बुद्धिमान वह है, जो किसी को गलतियों से हानि होते देखकर अपनी गलतियाँ सुधार लेता है।

✧ लोक क्या कहते हैं, इस पर ध्यान मत दो। सिर्फ यह देखो कि जो करने योग्य था, वह बन पड़ा या नहीं।

✧ धरती पर प्रेम, आत्मीयता एवं दूसरों के हित में लगे रहना ही पुण्य है। ❑❑

मुद्रक—युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा (उ. प्र.)